जनसत्ता

विकल्प का सम्मान

इस साल का अर्थशास्त्र का नोबेल पुरस्कार यह दर्शाता है कि अर्थव्यवस्था के तकाजे के हवाले से गरीबों और वंचितों के सवाल किसी न किसी बहाने तात्कालिक रूप से पीछे छोड़ देने की दलील के बरक्स बेहतर संकल्पनाएं मौजूद हैं। अब निश्चित रूप से फिर इस सिरे से अर्थव्यवस्था का विश्लेषण होगा और चुनौतियों का हल निकालने की कोशिश होगी। अभिजित बनर्जी, एस्थर डफ्लो और माइकल क्रेमर को संयुक्त रूप से मिला नोबेल पुरस्कार दरअसल विकास के अर्थशास्त्र को फिर से जीवित करने में उनके योगदान के लिए दिया गया है। अर्थव्यवस्था की सतही चकाचौंध के बरक्स इन प्रयोगधर्मी अर्थशास्त्रियों ने यह साबित किया कि दुनिया भर में पसरी गरीबी से छोटे और ज्यादा सटीक सवालों के जरिए कैसे निपटा जा सकता है। नोबेल समिति ने उनके योगदान के बारे में कहा कि इन तीनों ही अर्थशास्त्रियों के प्रयोगधर्मी दृष्टिकोण ने पिछले कई दशकों में विकास अर्थशास्त्र के स्वरूप को बदला है। उनके अध्ययनों और प्रयोगों के निष्कर्षों के जरिए खासतौर पर गरीब और मध्य आय वाले देशों में नीति निर्माण में काफी मदद मिल सकती है। इन तीनों ने ही गरीबी, असमानता और जनकल्याण जैसे समान विषयों पर शोध किए हैं जो तीसरी दुनिया के देशों के लिए बेहद अहम साबित हो सकते हैं।

सन 1998 में अमर्त्य सेन को अर्थशास्त्र में गरीबी उन्मूलन की दिशा में ही काम करने के लिए नोबेल सम्मान मिलने के इक्कीस सालों बाद यह दूसरा मौका है जो भारत के लिए खास और अहम है। दरअसल, अभिजित बनर्जी भारतीय मूल के हैं जिन्होंने दिल्ली के जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय से पढ़ाई की है। एक अन्य खास बात यह भी है कि अर्थशास्त्र में इस साल की नोबेल तिकड़ी में अभिजित बनर्जी और एस्थर डफ्लो पति-पत्नी भी हैं। इन्होंने अपने प्रयोगों के जरिए यह साबित किया कि गरीबी के मुद्दे पर बड़ी-बड़ी बहसों के बजाय अगर गरीबी को दूर करने के लिए लघुस्तरीय कार्यक्रमों को व्यापक पैमाने पर अंजाम दिया जाए तो वह ज्यादा उपयोगी है। अगर गरीब तबकों के बीच शिक्षा, पोषण और टीकाकरण जैसे कामों को मुख्य केंद्र बनाने के साथ-साथ लोगों को थोड़ी सहायता दी जाए तो ऐसे कार्यक्रमों में अपेक्षा से अधिक कामयाबी दर्ज की जा सकती है। मसलन, एक प्रयोग के तहत इन अर्थशास्त्रियों ने प्रोत्साहन के तौर पर सिर्फ दाल का इस्तेमाल करके राजस्थान के एक इलाके में टीकाकरण के कार्यक्रम को सफलता से पूरा किया।

आधुनिक विश्व में बाजार को सबसे बड़ी ताकत माना जाता है और किसी भी देश की अर्थव्यवस्था को उसकी मजबूती और कमजोरी का एक सबसे अहम पहलू। दुनिया भर में अब इसी केंद्र के इर्द-गिर्द न केवल विकास से संबंधित गतिविधियां चल रही हैं, बल्कि राजनीति भी इसी से प्रभावित होती है। लेकिन इसी के समांतर ऐसे सवाल भी उठते रहे हैं कि किसी लोकतांत्रिक देश में अर्थव्यवस्था केंद्रित विकास में अगर अमीरों और गरीबों के बीच की खाई बढ़ती जा रही है तो ऐसा क्यों है और आखिर इसकी वजहें क्या हैं! इसका जवाब केवल विकास के 'संक्रमणकाल' या फिर धीरे-धीरे रिस कर वंचित तबकों तक पहुंचने के आश्वासन भर से नहीं ढूंढ़ा जा सकता है। इसके लिए प्रयोगात्मक और ठोस नतीजे देने वाले उदाहरणों की जरूरत पड़ेगी, खासतौर पर जब विकासशील देशों में उदारीकरण और मुक्त बाजार के दौर में अमीरी-गरीबी की खाई के लगातार बढ़ते जाने की समस्या गहराती जा रही हो। ऐसे में इस साल अर्थशास्त्र के संयुक्त रूप से नोबेल पुरस्कार विजेताओं ने अर्थव्यवस्था और उसकी इस समस्या और उसकी जटिलताओं की पहचान करके उसके समाधान का विकल्प भी सामने रखा है।

संकट में ग्राहक

पंजाब एंड महाराष्ट्र सहकारी बैंक (पीएमसी) के ग्राहकों को अपना ही जमा पैसा नहीं मिल पाने की वजह से कितने गंभीर संकटों का सामना करना पड़ रहा है, कोई सोच भी नहीं सकता। लोग आज अपने पैसे के लिए तरस रहे हैं। पिछले तीन हफ्तों से पीएमसी बैंक और रिजर्व बैंक के बाहर धरने-प्रदर्शन हो रहे हैं। कई ग्राहक जिनकी लाखों रुपए की एफडी बैंक में फंस गई हैं, सदमे से उबर नहीं पा रहे। सोमवार को एक ऐसे ही खाताधारक की तनाव के चलते दिल का दौरा पड़ने से मौत हो गई। इस ग्राहक की नब्बे लाख रुपए की एफडी बैंक में फंसी है। वह सोमवार को बैंक के सामने प्रदर्शन करके घर लौटा था और पैसे नहीं निकल पाने के कारण तनाव में था। इस तरह के तनाव और मानसिक पीड़ा से हजारों ग्राहक गुजर रहे हैं, लेकिन सरकार पर रत्ती भर असर नहीं दिखा है। सवाल है कि भ्रष्ट लोगों और बैंक का पैसा डकार कर भागने वालों के गुनाह का खमियाजा आखिर बैंक के ग्राहकों को क्यों भुगतना पड़े? आखिर कब तक लोग अपने पैसे के लिए तरसते रहेंगे?

पीएमसी के खाताधारकों के पैसे फंसने का मामला नोटबंदी की पीड़ा से भी ज्यादा मारक है। जिस व्यक्ति के अपने नब्बे लाख रुपए हों और वह दिव्यांग बेटे का इलाज भी न करवा पाए तो उसका सदमे में जाना स्वाभाविक है। लेकिन पीड़ा सुनने वाला कोई नहीं है। इसी तरह पिछले महीने किडनी का ऑपरेशन करवा कर आए एक मरीज की पचास लाख रुपए की एफडी है, पर इलाज के लिए पैसे हाथ में नहीं हैं। यह व्यक्ति वित्त मंत्री के सामने गिड़गिड़ाता रहा, लेकिन किसी का दिल नहीं पसीजा। ऐसे ढेरों किस्से हैं। बड़ी संख्या में वृद्धों की पेंशन का पैसा बैंक में जमा है, पर जरूरत भर का पैसा भी हाथ में नहीं तो किस काम का? एक तरफ सरकार नकदी लेनदेन को हतोत्साहित कर रही है, बैंकों में बचत को जमा करने के लिए लोगों को प्रेरित किया जा रहा है, डिजिटल लेनदेन को अनिवार्य करने की ओर अग्रसर है, दूसरी तरफ बैंकों में जमा पैसे की सुरक्षा की कोई गारंटी नहीं है। आखिर यह कैसा विरोधाभास है!

हाल में वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने मुंबई में बैंक के ग्राहकों से मुलाकात की थी और उन्हें भरोसा दिलाया था कि उनका पैसा सुरक्षित है और ग्राहकों को राहत दिलाने के बारे में वे रिजर्व बैंक के गवर्नर से बात करेंगी। इस बीच रिजर्व बैंक ने पीएमसी बैंक से निकासी की सीमा पच्चीस हजार से बढ़ा कर चालीस हजार रुपए कर दी है। आरबीआइ का कहना है कि अब बैंक के सतहत्तर फीसद खाताधारक अपना पूरा पैसा निकाल लेंगे। लेकिन बाकी तेईस फीसद ग्राहकों का क्या होगा जिनकी बड़ी रकम बैंक में सावधि जमा के रूप में रखी है। सवाल घूम-फिर कर यही आता है कि कैसे चालीस हजार रुपए में कोई छह महीने खींच पाएगा? क्यों नहीं लोगों को उनका जमा पैसा मिलना चाहिए? भारतीय रिजर्व बैंक की अनुमति से ही बैंक खुलते हैं और कारोबार करते हैं। लेकिन केंद्रीय बैंक किसी भी खाताधारक की अधिकतम एक लाख रुपए की ही सुरक्षा गारंटी लेता है। जब नकदी रखने को रोकने की कवायद चल रही तो इस सुरक्षा कवर को क्यों नहीं बढ़ाया जाना चाहिए? ये घटनाएं बता रही हैं कि भारत के बैंक सुरक्षित नहीं रह गए हैं। और दो-चार बैंकों के मामले सामने आए तो लोगों का बैंकिंग व्यवस्था से भरोसा उठते देर नहीं लगेगी। बैंकिंग व्यवस्था को लेकर भरोसा बनाना रिजर्व बैंक और सरकार की जिम्मेदारी बनती है।

कल्पमेधा

ज्ञानी आदमी के खोखले ज्ञान से सावधान; वह अज्ञान से भी ज्यादा खतरनाक है।
-बर्नार्ड शॉ

जाते मानसून के सबक

सुविज्ञा जैन

इस बार के मानसून ने जाते-जाते हमें जो सबक दिए हैं, उनमें सबसे बड़ा सबक जल प्रबंधन का ही है। हमें तत्काल एक ऐसी योजना बनाने के बारे में सोचना चाहिए कि प्राकृतिक संसाधन के रूप में जितना पानी हर साल उपलब्ध होता है, उसका ज्यादा से ज्यादा लाभकारी इस्तेमाल कैसे किया जा सकता है। जितना पानी हम इस्तेमाल कर रहे हैं, उससे दुगना पानी बाढ़ की तबाही मचाता हुआ बेकार न जाए।

इस बार मानसून कई सबक देकर जा रहा है। वैसे मानसून का अपना तय समय एक जून से तीस सितंबर है। माना जाता है कि एक सितंबर से मानसून लौटना शुरू हो जाता है। लेकिन इस साल मानसून की विदाई चालीस दिन देर से हो रही है। पिछले पचास साल में पहली बार ऐसा हुआ है जब मानसून इतनी देर से जा रहा है। मानसून खत्म होने की निर्धारित तारीख के दो हफ्ते बाद तक देश के कई हिस्सों में इतना ज्यादा पानी गिरा जितना आमतौर पर जुलाई-अगस्त के दिनों में गिरा करता था। कुल मिला कर सरकारी मौसम विभाग के सारे अनुमान इस साल बुरी तरह गड़बड़ा गए।

पूर्वानुमानों की गलती की नापतोल करें तो कहा जा सकता है कि इन अनुमानों में चौदह फीसद का अंतर पड़ गया। मौसम विभाग ने वर्षा काल शुरू होने के पहले अपनी अत्याधुनिक वैज्ञानिक पद्धति से अनुमान लगाया था कि इस साल पिछले पचास साल के औसत से चार फीसद पानी कम गिरेगा। यानी अनुमान छियानवे फीसद बारिश का था, लेकिन बरस गया एक सौ दस फीसद। गौरतलब है कि वैज्ञानिक आकलन में चार फीसद कम या चार फीसद ज्यादा की एक खिड़की बना कर रखी जाती है। उस लिहाज से ज्यादा से ज्यादा सौ फीसद वर्षा का अनुमान था, वह भी दस फीसद गलत हो गया। वैसे तो पिछले कई साल से पूर्वानुमानों में गड़बड़ी होती रही है। इस साल मानसून के अपने पूर्वानुमानों से मौसम विज्ञानियों को एक बड़ा सबक मिला है।

यह तो उस पूर्वानुमान की बात हुई है जो पूरे देश में कहीं ज्यादा और कहीं कम बारिश होने के आंकड़ों को जोड़ कर और भाग देकर निकाला जाता है। अगर देश के अलग-अलग चार जोन के पूर्वानुमानों को वास्तविक वर्षा से मिलान करें तो पता चलेगा कि गलती की और ज्यादा हद हो गई। मसलन, बारिश के पहले अनुमान बताया गया था कि मध्य भारत में सौ फीसद बारिश होगी। इस अनुमान के मुताबिक मध्य भारत में बानवे फीसद से लेकर एक सौ आठ फीसद के बीच पानी गिरने की बात कही गई थी, लेकिन बरस गया एक सौ उनतीस फीसद। लगभग यही हालत दक्षिण प्रायद्वीप क्षेत्र की हुई। पूर्वानुमान था सनतानवे फीसद का और वास्तविक वर्षा हुई एक सौ सोलह फीसद। देश के उत्तर-पश्चिम और उत्तर पूर्वी क्षेत्रों में सामान्य वर्षा जरूर दर्ज हुई, लेकिन कई जगह सामान्य से बहुत कम बारिश के कारण अलग तरह की समस्या पैदा होने का अंदेशा सिर पर है। मसलन, देश के चार क्षेत्रों में जो कुल छत्तीस उपसंभाग हैं उनमें से पांच में अस्सी फीसद से भी कम बारिश हुई है। जहां बीस फीसद कम बारिश हो उन क्षेत्रों को पानी की कमी के लिहाज से संवेदनशील माना जाने लगता है।

अभी हमें सही-सही पता नहीं है कि इस बार देश में जो ताबड़तोड़ बारिश हुई है, उस पानी को हम कितना रोक कर रख पाए। लेकिन इतना तय है कि देश के पास सामान्य वर्षा के पानी को भी रोक कर रखने लायक बांध या जलाशय नहीं हैं। पचास साल के औसत जितनी यानी सौ फीसद बारिश हो तो देश में करीब सात सौ अरब घनमीटर सतही जल उपलब्ध होता है। लेकिन हमारे पास इस समय कुल दो सौ सत्तावन अरब घनमीटर पानी रोक कर रखने भर के बांध हैं। इसलिए यह बिल्कुल सोचना निरर्थक होगा कि अगर देश में ज्यादा पानी गिरा है तो आने वाले दिनों में पानी की कमी नहीं पड़ेगी। वैसे भी केंद्रीय जल आयोग के आंकड़े को देखें तो मानसून की निर्धारित अंतिम तिथि के फौरन बाद यानी तीन अक्तूबर के दिन देश के मुख्य बांधों में सिर्फ एक सौ बहत्तर अरब घनमीटर पानी जमा हो पाया था, जो अपनी कुल क्षमता का छियासठ फीसद है। जाहिर है, इस बार बादलों से जो लबालब पानी मिला था, वह नदियों से होता हुआ और बाढ़ की तबाही मचाता हुआ वापस समुद्र में चला गया।

गौरतलब है कि औसत से दस फीसद ज्यादा या दस फीसद कम बारिश को असामान्य घटना माना जाता है। इस बार के आंकड़ों का विश्लेषण करें तो देश के छत्तीस उपसंभागों में से बारह उपसंभाग अतिवर्षा से पीड़ित हुए हैं। जिन उपसंभागों में औसत

से बीस फीसद या उससे भी ज्यादा बारिश होती है, उन्हें असामान्य रूप से ज्यादा वर्षा की श्रेणी में रखा जाता है। इस बार अतिवर्षा का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि इन उपसंभागों में दस ऐसे हैं जिनमें औसत से बीस फीसद से लेकर उनसठ फीसद तक ज्यादा बारिश हुई। दो उपसंभागों में साठ फीसद से भी ज्यादा पानी गिरा। देश के जो इलाके अतिवर्षा से पीड़ित हुए हैं, उनकी व्यथा पिछले डेढ़ महीने से पूरा देश देख ही रहा है।

इस बार के मानसून से एक सबक यह भी मिला है कि देश के पास औसत से कम से कम दस या पंद्रह फीसद ज्यादा बारिश की सूरत में बाढ़ से बचाव का इंतजाम तो होना ही चाहिए। यह कोई बहुत बड़ा काम नहीं है, बल्कि पिछले कुछ साल से देश जिस तरह पानी की कमी से जूझता दिखने लगा है, उस हिसाब से तो वर्षा के ज्यादा से ज्यादा पानी को सुरक्षित तरीके से जमा करने की हमें सख्त जरूरत है। बांधों और जलाशयों में पानी को रोक कर बाढ़ से बचाव तो एक बोनस जैसा होगा।

बाढ़ या सूखे से बचाव, जल संचयन या जल प्रबंधन का काम जल विज्ञानियों का है। भारत में जल विज्ञानी आमतौर पर सिविल इंजीनियर ही होते हैं, क्योंकि ये इंजीनियर ही बांध और नहरें बनाने का विशेषज्ञ कार्य कर सकते हैं। वर्षाकाल में बांधों में जल भंडारण पर निगरानी का काम भी इन्हीं के जिम्मे होता है। लेकिन देश के स्तर पर जल प्रबंधन का अर्थशास्त्र और जल प्रबंधन की सांख्यिकी का विशेषज्ञ होना बिल्कुल ही अलग बात है। सार्वजनिक निर्माण अभियांत्रिकी में हुनरमंद बनाए गए पेशेवरों से यह उम्मीद करना कि वे मौसम विज्ञान में भी पटु हों, अर्थशास्त्र को भी समझें और सांख्यिकी के नुक्ते भी जानें, प्रबंधन भी देखें, उन पर ज्यादती ही है। जाहिर है, जल प्रबंधन के काम को एक अंतर-विषयक कार्य बनाने की जरूरत है और उनके बीच समन्वय के लिए प्रबंधन प्रौद्योगिकी विशेषज्ञों को बीच में लाने की दरकार है।

आज के जमाने में जब देश में हर क्षेत्र की व्यवस्थाओं में प्रबंधन प्रौद्योगिकी का महत्त्व समझा जा रहा हो, अगर जल प्रबंधन में प्रबंधन प्रौद्योगिकी का दखल न दिखता हो, तो इस स्थिति पर आश्चर्य जताया जाना चाहिए। सबसे ज्यादा हैरत इस बात पर होनी चाहिए कि भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारियों से तो हम उम्मीद कर लेते हैं कि जल प्रबंधन की जटिलताओं को वे समझ लेंगे, लेकिन जल प्रबंधन के काम में प्रबंधन प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल करने की तरफ हमारा ध्यान नहीं है। जबकि जल प्रबंधन में प्रबंधन शब्द का इस्तेमाल हम दशकों और सदियों से करते आ रहे हैं।

इस बार के मानसून ने जाते-जाते हमें जो सबक दिए हैं, उनमें सबसे बड़ा सबक जल प्रबंधन का ही है। हमें तत्काल एक ऐसी योजना बनाने के बारे में सोचना चाहिए कि प्राकृतिक संसाधन के रूप में जितना पानी हर साल उपलब्ध होता है, उसका ज्यादा से ज्यादा लाभकारी इस्तेमाल कैसे किया जा सकता है। जितना पानी हम इस्तेमाल कर रहे हैं, उससे दुगना पानी बाढ़ की तबाही मचाता हुआ बेकार न जाए।

सोने-जागने का संघर्ष

विकेश कुमार बडोला

दुनिया मेरे आगे

जब तक निश्चिंत रहा, खेलता-दौड़ता भागता फिरता रहा, तब तक ही आठ और उससे ज्यादा घंटों की नींद सो सका था। इसके बाद नींद मुझसे रूठ गई और अभी तक रूठी हुई है। शुरू में तो मैं इस अनिद्रा रोग से खुश था। इस दौरान 'जो जागत है वो पावत है, जो सोवत है वो खोवत है' वाक्य मुझे नींद पूरी नहीं होने जैसी बीमारी से लड़ने की शक्ति देता रहा। अपनी अधिकाधिक जागृत अवस्था से मैं अपने लिए दिव्य अनुभव बटोरता रहा। अनुभवों को लिखता रहा। तरह-बेतरह की परिस्थितियों के लिखे गए वर्णन पढ़ कर अच्छा लगता। दोस्तों को पढ़ाता। वे भी प्रभावित होते और निरंतर लिखने के लिए कहते। लेकिन उन्हें यह आभास नहीं था कि लिखने, पढ़ने और इससे प्रभावित होने का आनंद-स्रोत मेरी अनिद्रा थी। जवान शरीर और दिमाग के रहते तो नींद नहीं आने के दुष्परिणामों से बचा रहा, पर अब देर रात तक जागना यानी नींद नहीं आना कष्ट देता है। आंखों में जैसे सारे शरीर का भारीपन आकर स्थिर हो गया है। लेकिन इतना भार ढोते-ढोते भी थकावट से चूर आंखों में नींद का नाम नहीं है।

कई बार सोचा कि दिमाग को सोचने पर नहीं लगाऊंगा। केवल सोऊंगा। लेकिन नींद आ भी जाए, पर परिवेश के शोर को कैसे कम करूं, इससे छुटकारा कैसे पाऊं! किराए का दो कमरे का घर। सभी घर आपस में एक ईंट से खड़ी दीवारों से जुड़े हुए। आस-पड़ोस में कोई अपना बाथरूम का दरवाजा भी जरा जोर से बंद करता है तो अगल-बगल के दो-तीन घर हिल जाते हैं। कोई अपने किचेन में खाना बना रहा है या बर्तन धो रहा है तो उसकी आवाज भी ऐसे सुनाई दे, जैसे अपने ही घर में यह सब हो रहा है। जिस आदमी की नींद दीवार घड़ी की सेकेंड वाली सुई की टक-टक से भी उचट जाती हो, उसके लिए आसपास के ऐसे हो-हल्ले किसी विस्फोट से कम नहीं हैं।

उस रात भी कुछ न सोचने के प्रण के साथ जैसे ही सोने की कोशिश की तो पीछे के घर से पति-पत्नी के लड़ने, चीखने, आपस में गाली-गलौज करने की कर्कश आवाजें आने लगीं। पत्नी ने जितनी भी बातें कहीं, उनसे उस घर की पूरी कहानी समझ आ गई। समय देखा तो रात के सवा एक बज रहे थे। शायद वे आपस में लड़ते-झगड़ते थक गए तब आधे घंटे बाद शांति छा गई। सोचा अब नींद का ध्यान करूं। इतने में गली के कुत्ते मिल कर जोर-जोर से भौंकने लगे। रात की शांति भंग करते हुए इतने कुत्तों का एक साथ भौंकना, लगा जैसे शोर का तूफान गलियों से उठ कर आसमान और मेरे कमरों की तरफ ही बढ़ रहा है। पहले ही सिर भन्ना रहा था और अब वह भारीपन से बुरी तरह दब गया।

जब सब तरह का शोर थम गया तो पानी पीकर लेट गया। घड़ी साढ़े तीन बता रही थी। अब सुबह होने तक करवट गिनने की बारी थी। पांच से छह बजे के बीच अगर थोड़ी नींद आती भी तो वह सुबह के कोलाहल से उचट जाती। अंत में अखबार वालों, दूधिया, स्कूली बच्चों, मोटरसाइकिल, कार, खाना बनाने, बर्तन धोने की आवाजों के साथ विचित्र सपनों के आने-जाने के बीच सोने और जागने का संघर्ष। इन सबसे खुद को किसी तरह बचाने के लिए पार्क में जाकर बैठ गया। पेड़, पौधे, हरी-हरी घास, रंग-बिरंगी कलियां और फूल, गिलहरी, कबूतर, चिड़िया, गीली मिट्टी को एक-डेढ़ घंटे तक देखता रहा। प्राकृतिक ठंडी हवा का सेवन करता रहा। रात के शोर, अनिद्रा, बेचैनी, थकावट से लड़ने के लिए सुबह इन्हीं की सहायता लेता हूं। रात भर नींद न आने के बाद भी दिन भर रोजगार के लिए प्रकृति ही मुझे जागृत करती है।

पार्क से बाहर निकला तो तेज हॉर्न बजाते वाहनों का अनावश्यक ध्वनि-प्रदूषण, कबाड़ी वालों का गला फाड़ चिल्लाना, रेहड़ी-फेरी वालों का वस्तु बिक्री गान सुनाई दिया। रात मेरे जैसों की नींद हराम करने के बाद कुत्ते यहां-वहां पसरे हुए सो रहे थे। ये हाईटेक सिटी नोएडा की कहानी है। व्यक्ति के लिए इतनी दुश्वारियां होने के बाद भी कर्ताधर्ताओं के लिए तरक्की शब्द आकर्षण बना हुआ है। आदमी वाहन चला रहा है या पैदल चल रहा है, वह घर में है या बाहर सब जगह ध्वनि-प्रदूषण का आतंक है।

मनोज कुमार अभिनीत 'शोर' फिल्म की याद आती है। उसमें एक अभिनेता जीवन परिवेश के शोर से इतना दुखी हो जाता है कि एक दुर्घटना में अपनी सुनने की शक्ति गंवाने के बाद उसे दुख नहीं होता। बहरा होना उसे श्रवणशक्ति से पूर्ण होने से ज्यादा भाता है। बहरेपन में जब कोई उसे इशारे से आसमान में उड़ता हवाई जहाज दिखाता है तो वह उसे देख, उसकी गड़गड़ाहट को नहीं सुन कर एक खास तरह की आत्मसंतुष्टि महसूस करता है। अपनी स्थिति भी शोर से आहत किसी पात्र की तरह ही है।

जात न पूछो

पिछले दिनों जैसे ही लोक सेवा आयोग उत्तर प्रदेश द्वारा पीसीएस 2017 का अंतिम परिणाम जारी किया गया, सभी चयनित प्रतियोगियों को बधाई व शुभकामनाएं जाति के चश्मे से देख कर दी जाने लगीं। यह सही है कि लोक सेवा आयोग समेत अन्य आयोगों की भूमिका पर लगातार सवाल उठते रहे हैं, लेकिन जिस तरह से हम अपनी सहूलियत के अनुसार एक खास जाति व समुदाय के चयनित प्रतियोगियों को बधाई देते हैं और अन्य जाति व समुदाय के चयनित प्रतियोगियों की मेधा पर संदेह प्रकट करते हैं, वह कतई सही नहीं है।

यह गौरतलब है कि लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित पीसीएस परीक्षा तीन चरणों से होकर गुजरती है। जो प्रतियोगी महज प्रारंभिक परीक्षा पास कर लेता है, माना जा सकता है कि उसमें कहीं न कहीं मेधा तो छुपी ही होगी। तभी वह अगले चरण तक पहुंच पाता है। इसी के समांतर मुख्य परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद साक्षात्कार को पार करना एक बेहद चुनौती-पूर्ण कार्य होता है। साक्षात्कार तक पहुंचना ही अपने आप में यह बताता है कि अमुक प्रतियोगी अन्य लाखों प्रतियोगियों से अलग है, तभी वह अंतिम चरण तक पहुंच पाया है।

पिछले दिनों सोशल मीडिया पर जिस तरीके से किसी जाति विशेष के प्रतियोगियों की सफलता को देख कर उनकी मेधा पर सवाल उठाया गया, उनकी प्रतिभा पर संदेह प्रकट किया गया, उससे एक प्रतियोगी के रूप में मुझे बेहद कष्ट हुआ। हमें कम से कम लोक सेवा आयोग की मर्यादा और गरिमा का खयाल तो रखना ही चाहिए। आयोगों की भूमिका सवालों के घेरे में होने के बावजूद हमें प्रतियोगिताओं की सफलता को जाति के चश्मे नहीं देखना चाहिए। ऐसा करना उन प्रतियोगियों के साथ नाइंसाफी होगा, जिन्होंने अपनी मेहनत और प्रतिभा के बल पर सफलता अर्जित की है। हालांकि ऐसा नहीं है कि यह इसी सरकार के समय हो रहा है, पिछली अन्य सरकारों के दौरान भी जब किसी परिणाम की घोषणा हुई होगी, प्रशंसा और निंदा करने वाले लोगों की जमात चयनित और अचयनितों पर टूट पड़ी होगी, जो कि सरासर गलत है। जाति के चश्मे से किसी प्रतियोगी की सफलता या विफलता का निर्धारण करने वाली सोच न तब सही थी और न अब सही है।

● *जीतेंद्र प्रताप यादव, खानियापुर, प्रतापगढ़*

ड्रैगन के साथ

हाल ही में चीन के राष्ट्रपति की महाबलीपुरम में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के साथ अनौपचारिक बातचीत हुई। जिस गर्मजोशी के साथ हमारे प्रधानमंत्री ने उनकी आवभगत की वह काबिलेतारीफ थी। इस यात्रा का महत्त्व इसलिए भी अधिक हो गया कि कश्मीर से अनुच्छेद 370 और 35ए हटाए जाने के बाद दोनों नेता पहली बार मिल रहे थे। इस बीच पाकिस्तान के प्रधानमंत्री इमरान खान भी शी-जिनपिंग से मिल चुके थे। चीन को कहीं न कहीं कश्मीर को लेकर हिचक है। वह पाकिस्तान को एक मोहरे की तरह इस्तेमाल कर रहा है और बार-बार कश्मीर को लेकर बयानबाजी कर रहा है। पाकिस्तान की हालत अब उसे बिना रस वाले नींबू की तरह लग रही है। इतिहास गवाह है कि चीन ने हमेशा हमें धोखा ही दिया है। पहले भी जब दोनों नेताओं की बात हुई थी तो डोकलाम विवाद पैदा हो गया था। पिछले साठ साल के घटनाक्रम पर गौर करें तो पता चलता है कि चीन ने हमेशा अपने प्रतीक चिह्न 'ड्रैगन' के अनुसार काम किया है। इसलिए ड्रैगन के साथ काम करने में सर्तकता की आवश्यकता है।

● *भूपेंद्र सिंह रंगा, पानीपत, हरियाणा*

आतंक की सत्ता

इस समय भारत की निगाहें पेरिस की तरफ हैं जहां वित्तीय कार्रवाई कार्यबल यानी एफएटीएफ की बैठक चल रही है। अठारह अक्तूबर को निर्णय आ जाएगा कि पाकिस्तान को 'निगरानी सूची' में ही रखा जाता है या उसे 'गहन निगरानी सूची' में डाला जाता है। अगर उसे 'काली' या 'गहन निगरानी सूची' में डाला जाता है तो यह भारत की बहुत बड़ी जीत होगी क्योंकि जून में हुई पिछली बैठक में भी उसे फिर से 40 मापदंड दिए गए थे। वैश्विक आतंक पर रोक लगाने के लिए पाकिस्तान को जो भी काम दिए गए थे, उनमें से वह केवल तीन काम कर पाया है। चौदह मामले में सिर्फ शुरुआत हुई है। बाकी में कुछ हुआ ही नहीं है।

इसका अर्थ यह हुआ कि पाकिस्तानी हुकूमत बिना आतंकी सहयोग के चल ही नहीं सकती। दहशतगर्दी ही वहां की राष्ट्रनीति है। शायद इमरान सरकार इसलिए भी बेफिक्र हैं कि इस समय एफएटीएफ के अध्यक्ष का पद चीन के पास है। अमेरिका को भी अफगानिस्तान में उसकी जरूरत है। सऊदी अरब और मलेशिया जैसे देश धर्म के आधार पर पाक का पक्ष लेंगे। इसलिए अनुमान है कि एक बार फिर से उसे 'निगरानी सूची' में ही रखा जाएगा।

● *जंग बहादुर सिंह, गोलपहाड़ी, जमशेदपुर*

मिलावट का जहर

त्योहारों के मौसम में खाने-पीने की नकली और मिलावटी चीजें बेचने की होड़ लग जाती है। आज समाज में बहुत से ऐसे मुनाफाखोर लोग हैं जो अपने थोड़े से फायदे के लिए खाने-पीने की चीजों में मिलावट करके दूसरों की जान जोखिम में डाल देते हैं। खाने-पीने की मिलावटी चीजों का बच्चों की सेहत पर बहुत ज्यादा नकारात्मक असर पड़ता है और कई बार तो वे जानलेवा रोगों की गिरफ्त में फंस जाते हैं। इस सबके मद्देनजर स्वस्थ भारत के लिए खानपान की चीजों में मिलावट रोकना बहुत जरूरी है। सरकार और प्रशासन को आमजन की सेहत की सुरक्षा के लिए गंभीरता दिखाते हुए बाजार में बिकने वाली चीजों की समय-समय पर जांच करनी चाहिए। वैसे सरकार मिलावटी या घटिया गुणवत्ता वाली चीजों से बचने के लिए जागरूकता चलाने के अलावा हेल्पलाइन भी समय-समय पर शुरू करती आई है। लेकिन जब तक लोग किसी वस्तु या खाने-पीने की चीजों की गुणवत्ता पर खुद ध्यान नहीं देंगे और किसी गड़बड़ी की शिकायत नहीं करेंगे तब तक सरकार के उपभोक्ता संरक्षण के प्रयास कामयाब नहीं हो सकते हैं।

● *राजेश कुमार चौहान, जालंधर*

किसी भी मुद्दे या लेख पर अपनी राय हमें भेजें। हमारा पता है : ए-8, सेक्टर-7, नोएडा 201301, जिला : गौतमबुद्धनगर, उत्तर प्रदेश

आप चाहें तो अपनी बात ईमेल के जरिए भी हम तक पहुंचा सकते हैं। आइडी है : chaupal.jansatta@expressindia.com

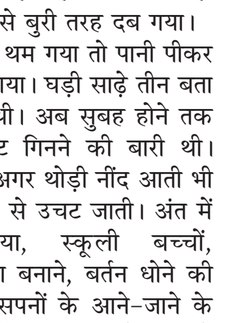

epaper.jansatta.com